दयानन्द के दर्शन का समालोचनात्मक मूल्यांकन

डॉ. अभिमन्यु वशिश्ठ

प्राचार्य सिद्धेश्वर विनायक शि. प्रशि. महाविद्यालय, धरियावद जिला . प्रतापगढ़ (राज.)

गोविन्द गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बांसवाड़ा (राज.) से सम्बद्ध

मो. 7023164451 ईमेल – abhimanyuvashistha810@gmail.com

प्रस्तावना

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म नाम मूलशंकर था।मोरवी(गुजरात) में एक सामवेदी ब्राम्हण परिवार में 1824 में उनका जन्म हुआ था। 21 वर्ष की आयु में उन्होंने गृह त्याग दिया तथा ज्ञान की खोज में देश के विभिन्न भागों का भ्रमण करते रहे। 1860 में उनका सम्पर्क मथुरा के स्वामी विरजानन्द से हुआ,इनके सम्पर्क में दयानन्द ने वेद विद्या का ज्ञान प्राप्त किया। 16 वीं शताब्दि में ईसाई (कैथोलिक) धर्म को उसकि बुराईयों तथा विकृतियों से मुक्त कराने के लिए धर्म–सुधारवादी आंदोलन को शुरु करने का श्रेय जिस प्रकार मार्टिन लूथर को दिया जाता है , 19 वीं सदी में भारत में हिन्दू समाज तथा हिन्दू धर्म में प्रचलित अनेक बुराईयों के सुधार की योजना दयानन्द ने अपने हाथों में ली थी। इसीलिये दयानन्द को ''भारतीय लूथर'' कहा गया है। अपने विचारों एवं संगठन के माध्यम से दयानन्द ने जिस नवीन सामाजिक , धार्मिक एवं राजनीतिक चेतना का आविर्भाव किया था वही चेतना कालान्तर में भारतीय राजनीतिक चेतना की आाधार"ाला बन गई।इसीलिए दयानन्द का भारतीय ''राष्ट्रीय पुनर्निमाण का प्रबल मन्त्रदृष्टा'' कहा जाता है।

प्रमुख विचार स्त्रोत

दयानन्द ने अपने विचारों को व्यक्त करने तथा उनका प्रसारण करने के लिए अनेक पेम्फलेत,पुस्तिकॉए तथा ग्रन्थों कि रचना की। उनकी प्रमुख रचनाओं में – अर्द्वत खण्डम् , वेदभाष्य , सन्ध्या भागवत खण्डम् , आर्योद्देश्य रत्नमाला , भ्रान्ति निवारण , संस्कार विधि , ऋगवेददि भाष्य भूमिका , व्यवहार भानू , वेदांग प्रका"ा तथा सत्यार्थ प्रका"ा शामिल हैं। उनके सामाजिक , धार्मिक , राजनीतिक एवं नीतिशास्त्र संबंधी विचारों का निरुपण सत्यार्थ प्रका"ा ग्रन्थ में किया गया है।

दयानन्द का सामाजिक दर्शन

स्वामी जी का सामाजिक समस्याओं को देखने का दृष्टिकोण सुधारवादी था। उनकी कल्पना के स्वस्थ हिन्दू समाज का मूलाधार जातीय एकता था जिसमें जातीय उॅच नीच के भेदभाव समाप्त हों तथा जो वैदिक मूल्यों से अनुप्राणित हों। दयानन्द के सामाजिक द"ार्न को इसि सुधारवादी परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है –

□(अ) जाति व्यवस्था – दयानन्द मानते थे कि जाति की सम्प्रति प्रथा वैदिक व्यवस्था का विकृत रुप है। उनका मत था कि किसी व्यक्ति कि जाति का निर्धारण उसके 'गुण' (चरित्र), 'कर्म' और 'स्वभाव'(प्रकृति) के आधार पर किया जाना चाहिए न कि उसके 'जन्म' के आधार पर।

(ब) अस्पृ"यता – दयानन्द ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि अस्पृ"यता वैदिक धर्म के आदे"ाों के प्रतिकूल है तथा देव–नियोजित भी नहीं है।उनका मानना था कि अस्पृ"यता जैसी सामाजिक बुराई का प्रादुर्भाव उस समय हुआ

जब समाज ने ऐसे लोगों को धर्म–निष्काषित कर दण्डित किया जिन्होंने समाज के मान्यताप्राप्त मूल्यों , नियमों , रीति–रिवाजों तथा नैतिकता के नियमों का उल्लंघन किया था। उनके मत में ''यदि कोई शूद्र तन–मन से शुद्ध है तो उसे 'द्विज' होने का अधिकार है।'' महात्मा गांधी ने लिखा है कि ''स्वामी दयानन्द ने हमें जो विविध अमूल्य विरासतें दी हैं , उनमें अस्पृ"यता के विरुद्ध उनकी असंदिग्ध उद्घोषणा निःसंदेह एक अमूल्य विरासत है।''

(स) विवाह प्रथा में सुधार – उन्होनें बाल विवाह का विरोध इस तर्क पर किया कि शास्त्रों में कहीं भी बाल विवाह का समर्थन नहीं है तथा विवाहों को 03 श्रेणियों में बांटा यथा –उच्च(स्त्रीःपुः:24:48),मध्यम(स्त्रीःपुः:18:20) तथा निम्न कोटि विवाह(स्त्रीःपुः:16:24)। पुरुषों के लिए आद"र्ा आयु 24 से 48 वर्ष तथा स्त्रीयों के लिए आद"र्ा आयु 16 से 24 वर्ष बताई। समाज में वैधव्य के अनैतिक एवं वैयक्तिक परिणामों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने ''नियोग'' पद्धति का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार विधुर तथा विधवा का ''अस्थायी संयोग'' कराया जा सके। उनका विचार था कि यदि संभव न हो तब विधवा का पुनर्विवाह ही श्रेष्ठ उपाय है।

दयानन्द का धार्मिक दर्शन

उनके प्रमुख धार्मिक विचार निम्न प्रकार थे –

- उनकी धार्मिक मान्यता ई"वरवादी तथा एके"वरवादी थी (सत्यार्थ प्रका"ा अ.–7),
- ई"वर सर्व सत्य , सर्व ज्ञान , सर्व सौंदर्यमयी , सर्व व्यापी , सर्वज्ञ , अन"वर , निर्भय , शा"वत , निराकार , सर्व"ाक्तिमान , न्याय"ाी , दयावान , अनादी , अनन्त , असीम , नित व अतुल्य है ,
- बहुदेववाद व अवतारवाद में वि"वास नहीं ,
- मूर्तिपूजा तथा प"ाुबलि का विरोध ,
- वैदिक ज्ञान परम सत्य है ,
- ''पुनः वेदों कि ओर'' का नारा दिया,
- ई"वर सृष्टि तथा समस्त ज्ञान का आदि कारण है ,
- ई"वर एक है (सत्यार्थ प्रका"ा अंतिम अध्याय)।

संक्षेप में उनकी ई"वर की धारणा उपनिषद् में वर्णित सत् , चित्त तथा अपानन्द , अर्थात् '' सच्चिदानन्द'' रुपी ई"वर की है। उनके जीवन का लक्ष्य वैदिक ज्ञान तथा वैदिक मूल्यों के अनुकूल समाज की पुनर्रचना करना था।

दयानन्द का ि"ाक्षा दर्शन

वे ि"ाक्षा का सामाजिक एवं वैयक्तिक महत्व स्वीकार करते थे। सत्यार्थ प्रका"ा का तीसरा अध्याय पूरा ि"ाक्षा द"ार्न को समर्पित है। वे ि"ाक्षा को व्यक्ति के चरित्र निर्माण के लिए आव"यक साधन मानते थे। वे ि"ाक्षा का आधार नैतिक धार्मिक तथा अनिवार्य मानते थे। उन्होनें राज्य का यह दायित्व बताया है कि वह सभी प्रजाजनों कि ि"ाक्षा का समुचित प्रबंध करे। उनकी मान्यता है कि आयु के अनुसार विद्यार्थियों को व्याकरण , द"ार्न , संगीत ,विज्ञान , औषधि शास्त्र तथा वेदों का अध्ययन कराया जाय।

दयानन्द का राजनीतिक दर्शन

दयानन्द के राजनीतिक द"र्ान की प्रेरणा मनुस्मृति और वेद हैं जिनमें मुख्य बातें निम्न प्रकार थीं –

- राजतन्त्र में वि"वास ,
- राजा पर नैतिक नियमों का अंकु"ा ,
- कानून पर आधारित व्यवस्था ,
- लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था ,(धर्म सभा,विद्या सभा और शासन सभा के द्वारा)

दयानन्द का मानना था कि सार्वजनिक हितों के मामलों में राजा और प्रजा अन्तर– निर्भर होते हैं किन्तु व्यक्तिगत मामलों में उन्हें स्वतन्त्र रहना चाहिए।

आर्य समाज

दयानन्द ने ब्रह्म समाज से प्रेरित हो वैदिक धर्म के प्रचार हेतु एक संगठन स्थापित करने का नि"चय किया। इसी नि"चय का परिणाम 10 अप्रैल,1875 को बम्बई में प्रथम आर्य समाज कि स्थापना के रू‍ में सामने आया। आर्य समाज का मुख्य उद्दे"य था वेदों में वर्णित धर्म व व्यवस्था को उसके शुद्ध रुप में फिर से स्थापित करना तथा ऐसा करने के लिए उन सब धार्मिक अन्धवि"वासों , कुरीतियों एवं परंपराओं का , जिनका वेदों में उल्लेख नहीं है तथा जिन्हें कालान्तर में अपना लिष गया , उनका उन्मूलन करना। उन्होंने इस आर्य समाज के 10 उद्दे"य बताऐ थे।

विवेकवाद तथा सार्वभौमवाद

अपने जीवन के लक्ष्य कि घोषणा करते हुए उन्होंने कहा था कि – ''संसार अज्ञान तथा अन्धवि"वास कि श्रृंखला में जकड़ा हुआ है।मैं उस श्रृंखला को तोड़ने तथा दासों को मुक्त करने के लिए आया हूँ।'' अपने इस लक्ष्य कि प्राप्ति के लिए दयानन्द ने सत्य कि खोज और सत्य के अनुकरण पर जोर दिया। उनका कथन था – '' मेरा उद्दे"य मन , वचन तथा कर्म से सत्य का अनुसरण करना है।'' अपने अनुयायियों को उनकि सलाह थी –''हमें सदैव सत्य को स्वीकार करने तथा असत्य का परित्याग करने को उद्यत रहना चाहिए।'' सत्य कि इस खोज में दयानन्द ने मानव विवेक को आधार बनाने के लिए कहा। इस प्रकार वह विवेकवादी थे। इस विवेकवाद ने उनमें सार्वभौमवाद की भावना को जन्म दिया ।उनका सार्वभौमवाद मानता था – ''समाज का प्राथमिक उद्दे"य मनुष्य जाति कि शारीरिक , आध्यात्मिक तथा सामाजिक द"ाा को सुधार कर समस्त वि"व का कल्याण करना है।मैं उस धर्म को स्वीकार करता हूँ जो सार्वभौम सिद्धान्तों पर आधारित है।''

स्वदे"ाो , स्वराज तथा रा"ट्रवाद

दयानन्द ने विदे"ाी राज्य को सदैव ही दुखदायी माना।'सत्यार्थ प्रका"ा' में उन्होंने लिखा –'' विदे"ाी राज्य चाी जितनस अच्छा हो,लेकिन सुखदायक नहीं हो सकता।'' उनका दृढ़ वि"वास था –''कोई कितना ही कहे, परन्तु स्वदे"ाी राज्य सर्वोपरी होता है।'' इस तरह दयानन्द का राजनीतिक संदे"ा स्वदे"ाी तथा स्वराज का था। इस तरह जे. एन. फरूकहार के शब्दों में दयानन्द के अनुसार –''भारत का धर्म,साथ ही भारत की प्रभुसत्ता पर भारतीयों का अधिकार होना चाहिए।'' यह वह सिद्धान्त थे जो लाल–बाल–पाल के काल में राष्ट्रवाद के प्रमुख नारे बन गये।

दयानन्द के दर्शन का समालोचनात्मक मूल्यांकन

दयानन्द के द"र्ान का मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं में व्यक्त किया जा सकता है –

(अ) दयानन्द का विवेकवाद और सार्वभौमवाद पूर्णरूप से विकसित न हो सका क्योंकि उस पर वेदवाद की सीमा आरोपित कर दी गयी।

(ब) दयानन्द के राष्ट्रवाद की सीमाएं थी , वह अखिल भारतीय राष्ट्रवाद नहीं था। उनका राष्ट्रवाद हिन्दूत्व का पुट लिए हुए था।

(स) दयानन्द ने लोकतांत्रिक सिद्धान्त तथा व्यवहार के पक्ष को तीन प्रकार से बल प्रदान किया है–प्रथम सामाजिक विचारक के रुप में जन्म के स्थान पर गुण,कर्म और स्वभाव को महत्व , द्वितीय आर्य समाज के संगठनात्मक ढ़ांचे को प्रतिनिधियों के चुनाव के लोकतांत्रिक सिद्धान्त पर स्थापित किया और तिसरा अपने आद"ा राज्यतंत्र के लिए भी नीर्वाचन के लोकतांत्रिक सिद्धान्त को स्वीकारा।

(द) उनका राजतंत्र में तथा लोकतंत्र में एक साथ वि"वास विरोधाभासी प्रतीत होता है।

(य) दयानन्द ने '' कानून को भंग करने वालों को उनका अंग भंग करके , जला कर मार देने अथवा कुत्तों द्वारा नोंच कर मार डालने वाले निवारक दण्डों का वर्णन किया जो कि आधुनिक समाज के लिए बिल्कुल अप्रांसगिक हैं।

(र) तत्कालिन सामाजिक , धार्मिक एवं राजनीतिक व्यवस्था को नया स्वरुप प्रदान करने कि दृष्टि से दयानन्द ने ''पुनः वेदों की ओर'' का वैसा ही नारा दिया था जैसा कि रुसो ने विज्ञान , सभ्यता और संस्कृति से जनित सामाजिक असमानता का अन्त करने तथा समानता और स्वतंत्रता पर आधारित समाज कि पुनः प्राप्ति के लिए '' पुनः प्रकृति की ओर'' का नारा दिया था।

(ल) दयानन्द ने अपने विचारों की प्रेरणा मनुस्मृति से ली है लेकिन उनके धार्मिक विचारों में प"ाुबलि का विरोध किया है जबकि मनुस्मृति प"ाुबलि का विरोध नहीं करति है , यहां उनके विचारों में विरोधाभास है।

(व) दयानन्द के विचारों में पुनरुत्थान के बीज निहित हैं , उन्होंने समाज सुधार का प्रतिपादन किया था किन्तु उनकी प्रेरणा के आद"ा बिन्दु भूतकाल में थे।

संक्षेप में उनके विचारों में कहीं कहीं आव"यकता से अधिक विस्तार तथा रुढ़िवादी मान्यताएॅं हैं , किन्तु इनके बीच में जो तत्व सुस्पष्ट रुप से उभरकर सामने आता है वह है उनका ''मानवतावाद''। उनके विचारों का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति है जिसके भौतिक , नैतिक , तथा सामाजिक उत्थान की आाव"यकता पर वे बल देते थे। दयानन्द के विचारों का मानवतावादी दृष्टिकोण आधुनिक भारतीय चिन्तन की अनुपम उपलब्धि हे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बहरवाल, एम. (2008). *भारतीय राजनीतिक चिन्तक.* उदयपुरः हिमां"ाु पब्लिके"ान्स.
2. यादव, पी. (2007). *उदीयमान भारतीय समाज में f"k्षक.* आगराः साहित्य प्रका"ान.
3. पाण्डेय, आर. (2005). *उदीयमान भारतीय समाज में f"k्षक.* आगराः साहित्य विनोद पुस्तक मन्दिर.
4. शर्मा, ए. (मक.)(2006). *भारतीय द"ार्न के 50 वर्ष.* सागरः वि"वविद्यालय प्रका"ान.